ORIGINAL ARTICLE ISSN:-2230-7850

Indian Streams Research Journal

सांराश :-

रामकथा का जन–जन में अनुपम प्रभाव है। यह हमारे वैयक्तिक, सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन को प्रभावित करती रही है। रामकथा के प्रेरक प्रसंग आदर्श बनकर हमारी सोंस्कृतिक धरोहर के रूप में विद्यमान हैं। भारत के अतिरिक्त कई देशों की संस्कृति और कला में रामकथा का

रामकुमार मौर्य , राजेश लाल मेहरा

प्राध्यापक हिन्दी , शा. कला एवं विज्ञान महावि. रतलाम, म.प्र.

रामलीला : परम्परा, शिल्प और महत्त्व

प्रभाव दृष्टिगोचर है। बर्मा, जावा, थाइलैण्ड, श्रीलंका, इण्डोनेशिया, मलेशिया, कंबोडिया, जापान, चीन आदि देशों में इस कथा का प्रसार देखा जा सकता है। प्रसिद्ध साहित्यकार विष्णु प्रभाकर कहते हैं– ''इंडोनेशिया सहित इन सभी देशों में रामायण का अर्थ केवल नृत्य और नाट्य ही नहीं है बल्कि उसका वास्तविक मान आचार संहिता के रूप में होता है और यह किसी धर्म विशेष तक सीमित नहीं है।''1 रामकथा ने प्रत्येक देश काल में मनुष्य की नैतिकता और जीवन मूल्यों का सिंचन कर सांस्कृतिक चेतना को अनुशासित किया है। रामकथा को अभिनय के माध्यम से व्यक्त करने का एक लोकप्रिय और लोकोपयोगी माध्यम रहा है – रामलीला । भारत की जनता रामलीला के माध्यम से अपनी भक्ति भावना के प्रकटीकरण के साथ लोकरंजन भी करती रही है।

प्रस्तावना :

ऐतिहासिक दृष्टि से विचार करें तो वाल्मीकी रामायण में प्राप्त उल्लेखों से अनुमान लगाया जा सकता है कि रामलीला का विकास रामकथा गायन की परंपरा से हुआ होगा। कपिला वात्स्यायन के अनुसार– ''इस कथा का प्रारंभिक रूप एक हजार ईसा पूर्वा या 800 ईसा पूर्वा तक में मिलता है और निश्चय ही यह समय वाल्मीकि द्वारा रामायण के रचनाकाल से पहले का है।''2 वस्तुतः रामलीला का एक मात्र स्त्रोत राम कथा ही है। यह वाल्मीकि रामायण के अतिरिक्त तुलसीकृत श्री रामचरित मानस पर विशेष रूप से निर्भर है। तेलगु, कन्नड़, उड़िया, तमिल, बंगला, मराठी आदि भारतीय भाषाओं में रामकथा के आधार पर महाकाव्य रचे गए। रामचरित मानस लोकचित्त के सर्वाधिक अनुकरण करने से अत्यंत लोकप्रिय हुआ।

डॉ. वशिष्ठ नारायण त्रिपाठी लिखते हैं– ''रामकथा में युग–युग को मूल्यगत आधार देने की ऐसी अजस्त्र शक्ति है कि प्रत्येक युग का रचनाकार उसकी ओर आकृष्ट होता है। भास, भवभूति, कालिदास जैसे महान रचनाकारों के साथ–साथ आधुनिक युग में भारतेन्दु, गुरुदेव रवीन्द्र नाथ ठाकुर, मैथिलीशरण गुप्त, निराला, नरेश मेहता आदि रचनाकारों ने रामकथा की पुनर्रचना की है। वस्तुतः रामायण और महाभारत भारतीय संस्कृति और कला को व्यापक रूप से प्रभावित करने वाले महाकाव्य है। कला की कोई विधा इनके पुनः सृजन से विरक्त नहीं है, चाहे वह काष्ठ शिल्प हो या स्थापत्य, चित्रकला, मूर्तिकला आदि सभी कलारूपों में रामकथा की लोकप्रियता देखी जा सकती है।''3 जनजीवन से सीधे जुड़े अमर कथाकार मुशी प्रेमचंद ने भी 'रामलीला' नामक कहानी में रामलीला को चित्रित किया है।

रामलीला मूलतः लीलानाट्य है। इसके द्वारा दास्य भाव से भगवान की लीलाओं का सगुण रूप से स्मरण किया जाता है। इस प्रकार राम के सगुण स्वरूप और कर्मों का अनुकरण और अभिनय ही इसमें प्रधान तत्त्व है। इन लीला नाट्यों को मुख्य रूप से वैष्णव भक्ति की अंतर्धारा के रूप में विकसित हुआ माना जाता है। रामलीला के अतिरिक्त यक्षगान, कुटियाट्टम भागवतमेलम्, दशावतार, भवाई आदि लोकनाट्य के माध्यम से भी रामकथा का मंचन होता आया है। डॉ. जगदीश चन्द्र माथुर लोकनाट्यों को 'परंपराशील नाट्य' नाम देकर इन नाट्यों के सन्दर्भ से इस महादेश की विलक्षण सांस्कृतिक एकता चिन्हित करते हुए लिखते हैं, ''दक्षिण और पूर्वी भारत के परंपरागत नाट्यों में एक ही प्रकार के पौराणिक कथानकों का प्रयोग हुआ है। नृसिंहावतार, श्रीकृष्णलीला, रामचरित, महाभारत के दृश्य– ये कथाएँ असम से लेकर केरल तक सभी प्रकार के नाट्यों में मिलती है।''4

रामलीला अपने प्रारंभिक काल से लेकर निरंतर उन्नत और विकसित होती रही है। डॉ. वशिष्ठ नारायण त्रिपाटी के कथनानुसार5 रामलीला के अभिनय और रंग संगठन का निरंतर विकास भी होता रहा है। धार्मिक लोकनाट्य रूप में प्रस्तुत होने के अलावा 'राम कथा' पारसी थियेटर, नौटंकी आदि लोक नाट्यों के शिल्प में भी प्रस्तुत होती रही है। दूसरी ओर काशी या अन्य प्रदेशों में खेली जाने वाली रामलीला का पाठ, अभिनय या प्रस्तुति की दृष्टि से क्रमशः जो स्वरूप विकसित होता गया है उसके मूल में लोकचित्त की गतिमानता, लोकसंवेदना, लोकभाषा और लोक कला रूपों की भूमिका भी रही है।' राम कथा के अभिनय की परंपरा में तुलसी की प्रेरणा और प्रयत्न के अतिरिक्त कवि प्राणचंद के 'रामायण महानाटक' अैर हृदयराम के 'हनुमन्नाटक' का उल्लेख किया जाता है। उत्तर मध्यकाल में महाराज विश्वनाथ सिंह ने 'रामकथा' पर आधारित 'आनन्द रघुनंदन' नामक नाटक लिखा। इन नाट्यकृतियों में रामकथा को अपेक्षित रंग योग्यता में विकसित किया गया था। भारतेन्दु ने लोकनाट्यों की इस समूची परंपरा की क्षमता और प्रभाव को सबसे आगे बढ़ कर पहचाना। इस तरह से उन्होंने भारतीय लोक विधाओं का पूरा दोहन किया। इनके सामने इन लीला नाट्यों के अतिरिक्त अन्य नोकनाट्य रूपों में रंग संगठन की महत्त्वपूर्ण संभावनाएँ भी मौजूद थीं। इसलिए रामकथा के पाठ और अभिनय को उन्होंने एक नयी सज्जा प्रदान की। एक सचेत रंगकर्मी की तरह उन्होंने 'रामलीला' को नाट्य की गंभीरता से जोड़ा तथा इसके समुचित रंग निर्देशों की चिंता की। भारतेन्दु ने 'रामलीला' की संभावनाओं का भी बहुत सुन्दर उपयोग किया।

यह भी उल्लेख मिलता है कि भारतेन्दु और उनके मंडल के साहित्यकार एवं संस्कृतिकर्मी इन लीला नाट्यों के प्रदर्शन से भी गहरे जुड़े थे। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में दामोदर शास्त्री सप्रे के रामकथा विषयक तीन नाटक प्रकाश में आये। रामलीला बालकांड नाटक (सन् 1882), रामलीला अयोध्या कांड नाटक (सन् 1883) और रामलीला सुन्दर कांड नाटक (सन् 1889)। ये तीनों नाटक रामचरित मानस की प्रेरणा से रचे गये। इसी क्रम में शंकर देव के 'रामविजय' नामक नाटक का भी उल्लेख मिलता है। डॉ. दशरथ ओझा6 के अनुसार यह नाटक राम की ओर सीता के विवाह से प्रारंभ होकर रावण वध तक की कथा को विकसित करता है तथा इसमें लेखक ने अपनी कल्पना को थोड़ी उड़ान भी दी है। उल्लेख मिलता है कि यह नाटक कुंच बिहार के राजा और दीवान के आग्रह पर अभिनय के लिए लिखा गया और अनेक बार अभिनीत भी हुआ है।

इसी प्रकार एक अन्य नाटक 'रामायण' का भी उल्लेख मिलता है। पंडित नारायण प्रसाद बेताब द्वारा रचित यह नाटक पारसी थियेटर के अंतर्गत अत्यंत लोकप्रिय था। इस नाटक में 24 गीत भी थे। इस नाटक की मूल प्रेरणा भी रामचरित मानस ही थी। उपर्युक्तानुसार रामकथा भी आधारित अनेक नाटक रचे गए, इनका मंचन भी होता रहा, परंतु इन सबको रामलीला की कोटि में नहीं रखा जा सकता है। रामलीला का अपना एक वैशिष्ट्य है। यह एक विशुद्ध लोकनाट्य है जो नाट्य की किसी विशेष विधा का अनुगमन न कर लोकधारा व लोकचित्त का ही अनुगमन करता है। आधुनिक साधनों के प्रति इसकी विरक्ति आलोचकों को भी चकित करती है। रामलीला की परंपरा में रामनगर (वाराणसी–उ.प्र.) की रामलीला का अतिविशिष्ट स्थान है। लगभग 1 महीने तक एकत्रित होते हैं। इसका महत्त्व इस रूप में भी है कि यह आज भी अपने पारंपरिक साधनों और शिल्प के साथ प्रस्तुत होती है। इस प्रकार एक श्रेष्ठ परंपरा का निर्वहन भी यहाँ होता है। रामलीला के दर्शन बड़े ही नियमित और अनुशासित होकर इसमें वैसे जाते हैं जैसे श्रद्धाभाव से तीर्थों में जाया जाता है।

काशी की 'रामलीला' के संबंध में अनुमान लगाया जाता है कि गोस्वामी तुलसीदास जी ने ही रामलीला के माध्यम से रामकथा के मंचन का सूत्रपात किया है। काशी की रामलीला कई मायनों में विशिष्ट है। अश्विन मास में खेली जाने वाली यह रामलीला एक ही स्थान पर मंचित न होकर अलग–अलग स्थानों पर मंचित होती है। कथा प्रसंगों के अनुसार काशी के कई मुहल्लों के नाम रामकथा के स्थलों के अनुसार स्थापित हो गए। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय का

मुख्य द्वार जहाँ है, वह 'लंका' के रूप में विख्यात है। कुछ विद्वान काशी में तुलसीदास जी के प्रयत्न से प्रारंभ होने वाली रामलीला से पूर्व रामकथा पर आधारित नाट्य 'रामलीला' को मानते हैं। मेधा भगत द्वारा रचित रामलीला के मूल में लोकसंवेदना, लोकभाषा और लोक नाट्य रहे होंगे, ऐसा अनुमान किया जा सकता है। रामनगर (वाराणसी) की रामलीला निर्विवाद रूप से सर्वाधिक प्रसिद्ध व लोकप्रिय है। यह भादो शुक्ल चतुर्दशी से प्रारंभ होकर अश्विन पूर्णिमा तक चलती है। डॉ. भानुशंकर मेहता रामनगर की रामलीला के मंच योजना की दर्शानिक गूढ़ार्थ की व्याख्या करते हुए बताते हैं, ''पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण में विभाजित इन मंचों में उत्तर में विष्णु मंच स्थापित है तथा दक्षिण में राजमंच, देवी मंच पूर्व में है तथा पश्चिम में जनमंच है, जहाँ रामायणी और जनता का स्थान है। बीच का स्थान दर्शकों द्वारा चतुर्दिक भरा जाता है। ये दर्शक भक्त दर्शक कहे जाते हैं। इनमंचों के गूढ़ार्थ के अंतर्गत वे क्रमशः चारों पुरुषार्थों, मार्गों, उपासना विधियों, चारों धामों आदि को रखते हैं।''7

रामलीला में परंपरागत रामकथा का मंचन होता है। रामलीला का आरंभ मुकुट पूजन से होता है जो एक प्रकार से भारतीय पूजा–पद्धति में शक्ति का आह्वान माना जाता है। बाल पात्रों में प्रभु के दिव्यत्व की स्थापना के बाद ही लीला आरंभ होती है। प्रतिदिन की रामलीला सायं 5 बजे से रात्रि 9 बजे तक चलती है। विशेष रूप से भरत मिलाप का प्रसंग रात्रि 9 बजे प्रारंभ होकर रात्रि 12 बजे समाप्त होता है। सूत्रधार के रूप में 'व्यास जी' पूरी लीला को निर्देशित करते चलते हैं, उनके पास परंपरित 'स्क्रिप्ट' होती है। रामलीला को महाराज बनारस भी विशेष श्रद्धा व सम्मान देते हैं। रामनगर की रामलीला के प्रेक्षकों की दो कोटियाँ मानी जाती हैं– नेमी और प्रेमी। नियमित रूप से आने वाले प्रेक्षक नेमी कहलाते हैं। इनके साथ रामचरितमानस का एक गुटका या पोथी, एक टार्च या लालटेन, बैठने के लिए आसन होता है। प्रेमी प्रेक्षक वे होते हैं जो विशेष प्रसंगों में उपस्थित होते हैं।

इस प्रकार लोकनाट्य परंपरा में 'रामलीला' का अतिशय महत्त्व है। यह प्रेरणा दायक रामकथा को जनसमूह तक पहुँचाने का सरल और सुगम माध्यम है। आज की रावण दहन के पूर्व लाखों स्थानों पर उपलब्ध साधनों का उपयोग कर रामलीला का मंचन करते हैं। बिना रामलीला के रावण दहन नहीं होता है। ये रामलीलाएँ धार्मिक लोकनाट्य के साथ ही जनजीवन के लोकोत्सव के रूप में भी लोकप्रिय हैं।

संदर्भ सूची

1. विष्णु प्रभाकर : जन, समाज और संस्कृति, पृ. 141
2. कपिला वात्स्यायन : पारंपरिक रंगमंच, पृ. 90
3. डॉ. वशिष्ठ नारायण त्रिपाठी : भारतीय लोक नाट्य, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 2001,पृ. 36–37
4. जगदीश चंद्र माथुर : परंपराशील नाट्य, पृ. 6
5. संदर्भ 3 के अनुसार, पृ. 38–39
6. डॉ. दशरथ ओझा, हिन्दी नाटक कोश, पृ. 46
7. डॉ. भानुशंकर मेहता : सन्मार्ग – भारतीय संस्कृति विशेषांक, सन् 1988, पृ. 65